क्षेत्रवाद

उपमहाद्वीप की विविधता में क्षेत्रवाद गहराई से बसा हुआ है। यह पहचान चिह्नकों की क्षेत्रीय एकाग्रता से प्रेरित है और वंचित होने की भावना से उत्तेजित हो जाता है। यह उन असफल आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति है जो देश के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक ढांचे में अभिव्यक्ति नहीं पा सके हैं। इस विनम्र विविधता के बीच, यह स्वाभाविक है कि किसी विशेष क्षेत्र, एक पार्टी, एक संस्था के लिए भावनाएं जो लोगों की स्थानीय आकांक्षाओं को एक आवाज प्रदान करती हैं। समय बीतने के साथ, इन स्थानीय आकांक्षाओं और उनकी बहुआयामी प्रकृति, क्षेत्रीयता को बल मिलता है।

चूंकि यह भावना वंचित करने के अनुभव से उत्तेजित हो जाती है, इसलिए निराशा और क्रोध की भावनाएं इसका कुल परिणाम हैं। इस संदर्भ में पूर्वाग्रह महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह एक व्यक्ति के मस्तिष्त पर स्थायी प्रभाव डालता है। इस प्रकार, क्षेत्रवाद लोगों के मस्तिष्क में जड़े बना लेता है और एक मानसिक घटना के रूप में सामने आता है।

ब्रिटिश भारत में भारतीय राज्य के औपनिवेशिक विभाजन और अलग-अलग धर्मों, जनजातियों, धर्म और भाषा की रियासतों ने कुछ नहीं परंतु जटिलता को बढ़ावा दिया। आजादी के सात दशकों के बाद, भारत में क्षेत्रों में अलग-अलग पहचान चिह्नकों द्वारा चिह्नित कई उप क्षेत्र शामिल थे जो उस विशेष क्षेत्र के लिए तीव्र निष्ठा में परिणत होते थे और विभिन्न रूपों में प्रकट होते थे।

अपने सबसे न्यायसंगत रूप में, क्षेत्रीयता अपने स्वयं के लिए एक अलग राज्य की मांग का रूप लेती है। इस तरह के क्षेत्रवाद को तेलगु भाषी निवासियों ने पूर्ववर्ती मद्रास में फैलाया था। क्षेत्रवाद का एक अन्य रूप परोपकारवाद है जो अपने परोपकारी रूप और बंद मुट्ठी दोनों को दर्शाता है। पूर्व में, हमारे पास बंगाली भद्रलोक का उदाहरण है, जो अन्य भारतीयों पर अपनी सांस्कृतिक श्रेष्ठता का दावा करते हैं। हालाँकि, यह हिंसा का रूप भी लेता है, जहाँ एक राज्य से दूसरे राज्यों में आने वाले लोगों के लिए रोजगार के अवसर जैसे कि शिवसेना के शासन के दौरान स्पष्ट था। दूसरा रूप वह हो सकता है जहां एक संप्रदाय भारतीय संघ से अलगाव की मांग करता है। यह क्षेत्रवाद का सबसे खतरनाक और गंभीर रूप है जो केन्द्रापसारक ताकतों का निर्माण कर रहा है। कश्मीर में खालिस्तान आंदोलन और वर्तमान उग्रवादी आंदोलन को इस श्रेणी में वर्गीकृत किया जा सकता है

भारत में क्षेत्रवाद: प्रक्षेप पथ

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में भारत में क्षेत्रवाद को तीन स्वरूपों में पहचाना जा सकता है, तीनों को राज्य के माध्यम से क्षेत्रीय पहचान के आवास के रूप में जाना जाता है। इस स्वरूप में, एक विशेष क्षेत्र में आने वाले क्षेत्रों और अन्य पहचान की संबद्धता पर क्षेत्रीय दलों का गठन भी ध्यान देने योग्य है।

1950 का दशक एक ऐसा समय था जब युद्धरत गुटों को राज्य के संस्थागत पैकेज के साथ नागरिकता के प्रति उत्तरदायित्व के साथ तीव्र जनसमूह का विकास हुआ। आंध्र प्रदेश के निर्माण के लिए पोट्टी श्रीरामुलु की मांग, और उपवास पर उनकी मृत्यु, नेहरू को देश के अन्य हिस्सों से इसी तरह की मांगों का पालन करने के लिए मजबूर किया। नतीजतन, राज्यों के पुनर्गठन आयोग ने भाषा के आधार पर नए राज्यों और 3 केंद्र शासित प्रदेशों के गठन की सिफारिश की।

दूसरा स्वरूप 1970 और 80 के दौरान देखा गया था, जिसमें मुख्य ध्यान उत्तर पूर्व के पुनर्गठन पर था। पुनर्गठन के पीछे मुख्य कारण आदिवासी विद्रोह था। राज्यों के पुनर्गठन अधिनियम, 1971 ने त्रिपुरा, मणिपुर और सिक्किम को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया और अरुणाचल एवं मेघालय के आदिवासी जिलों को केंद्रशासित प्रदेश बना दिया। 1986 में, इन्हें गोवा में 1987 में भाषाई आधार (कोंकणी) पर गठित होने के साथ ही राज्य का दर्जा दिया गया।

तीसरा तीन राज्यों (2000 में निर्मित) के लिए आंदोलन था- मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़, बिहार से झारखंड और उत्तर प्रदेश से उत्तरांचल बाहर या अलग करने के लिए। इन राज्यों के निर्माण का आधार सामाजिक-राजनीतिक बताया गया है न कि भाषाई। वर्ष 2014 में इसी तर्ज पर बनाया जाने वाला सबसे नया राज्य तेलंगाना है।

क्षेत्रवाद का कारण

स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत सरकार ने धर्म का पालन किया, यानी एक अतिवादी विचारधारा, भाषा और एक संस्कृति को लागू करने के लिए, विशेष रूप से उत्तर की ओर, शेष आबादी को नाराज कर दिया। दक्षिण ने हिंदी को आधिकारिक भाषा के रूप में लागू करने का विरोध करना शुरू कर दिया। इसी तरह असम में, उनके अनन्य पहचानकर्ताओं को संरक्षित करने के लिए एक विदेशी विरोधी आंदोलन शुरू किया गया था।

किसी विशेष क्षेत्र की आर्थिक और विकास की जरूरतों को पूरा करने में भारतीय राज्यों की विफलता, और उनके बीच लगातार दृढ़ता की भावना कि उनके साथ भेदभाव किया जा रहा है, क्षेत्रीयता के विकास का कारण बनी ।

संघवाद के लिए मार्ग प्रशस्त करने के अलावा उनके क्षेत्र के लिए अधिक स्वायत्तता की इच्छा ने भी क्षेत्रीयता को बढ़ावा दिया है। इस संबंध में विश्लेषण करने के लिए क्षेत्रीय अभिजात वर्ग की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। डी.एम.के., ए.आई.ए.डी.एम.के., असम गण परिषद जैसे राजनीतिक दलों ने क्षेत्रीय मुद्दों एवं स्थानीय आकांक्षाओं और लोगों को भड़काते हुए कहा है कि केंद्र सरकार क्षेत्रीय असंतुलन को बनाए रखने की कोशिश कर रही है।

आधुनिकीकरण के बल का परस्पर प्रभाव और आधे आधुनिक एवं आधे रूढ़िवादी तबके द्वारा अच्छे परिणाम सामने नहीं आए। पूरी तरह से उदार लोकतंत्र में परिवर्तित होने की अक्षमता, विभिन्न समूह राष्ट्रीय हित के साथ अपने समूह हित की पहचान करने में विफल रहे हैं।

सरकार ने क्या किया?

संविधान राज्यों के किसी भी वर्गीकरण के लिए सुविधा प्रदान नहीं करता है, लेकिन कुछ क्षेत्रों को दूसरों के संदर्भ ऐतिहासिक रूप से वंचित करता है। विशेष श्रेणी के राज्य को वर्ष 1969 में 5वें वित्त आयोग द्वारा प्रस्तुत किया गया था। यह अतिरिक्त केंद्रीय सहायता और कर रियायतों को प्रदान करता है। राष्ट्रीय विकास परिषद ने यह दर्जा कई सुविधाओं के आधार पर दिया है जिसमें पहाड़ी और कठिन भूभाग, बड़े पैमाने पर जनजातीय जनसंख्या की उपस्थिति, अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं के साथ रणनीतिक स्थान, आर्थिक एवं बुनियादी ढांचे का पिछड़ेपन आदि शामिल हैं।

सितंबर 2013 में, रघुराम राजन ने यह निर्धारित करने के लिए पिछड़ेपन के एक नए सूचकांक की सिफारिश की- किस राज्य को केंद्र सरकार से विशेष मदद की आवश्यकता है। यह 10 समान रूप से भारित संकेतकों से बना है। उस हिसाब से उड़ीसा और बिहार सबसे पिछड़े राज्य हैं।

14वें वित्त आयोग ने राज्यों को विभाज्य पूल का हिस्सा 32% से बढ़ाकर 42% कर दिया है। आयकर और कस्टम कर्तव्यों में रियायतों का आनंद लेने के अलावा, एस.सी.एस. राज्यों के लिए केंद्र प्रायोजित योजनाओं में 90% केंद्रीय हिस्सेदारी और 10% राज्य हिस्सेदारी के साथ सहायता दी गई थी। सरकार बुनियादी ढांचे के विकास और गरीबी उन्मूलन, ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन पर ध्यान केंद्रित करने वाली योजनाओं में नियमित रूप से निवेश कर रही है। मनरेगा, रोशनी जैसी योजनाएं इस संबंध में सरकार के प्रयासों का प्रमाण हैं।

केंद्र और राज्यों में सरकार निजी कम्पनियों को सब्सिडी, कराधान आदि के माध्यम से पिछड़े राज्यों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहन देती है, बैंकों का राष्ट्रीयकरण करती है, नए बैंकिंग लाइसेंस देती है, समावेशी विकास और संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए कुछ अन्य कदम उठाती है।

प्रतिक्रिया

क्षेत्रवाद प्रेरित हिंसा पूरे समाज को परेशान करती है। यह मानव संसाधन के विकास को प्रभावित करता है इसका राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर सीधा प्रभाव पड़ता है। प्रभावित समाज मुख्यधारा के विकास से अलग रहा है।

क्षेत्रीयता भी गठबंधन की राजनीति के युग में राजनीतिक अस्थिरता लाती है, जिसमें क्षेत्रीय सहयोगी के समर्थन में बहुमत खोने का लगातार खतरा है। यही नहीं, राष्ट्रीय मांगें अब क्षेत्रीय माँगों पर हावी होती दिख रही हैं।

यह विद्रोही समूहों द्वारा आंतरिक सुरक्षा चुनौतियां प्रदान करता है, जो देश के मुख्यधारा के राजनीतिक-प्रशासनिक सेटअप के खिलाफ क्षेत्रीयता की भावनाओं का प्रचार करते हैं।

क्षेत्रवाद अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में एक बाधा बन जाता है, खासकर सीमाओं पर। जैसे ममता बनर्जी के भूमि सीमा समझौते और तीस्ता नदी जल बंटवारे के विरोध ने न केवल द्विपक्षीय स्तर पर, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी भारत की रणनीतिक स्थिति पर प्रभाव डाला।

क्षेत्र हमारे राष्ट्र का आंतरिक हिस्सा हैं। आवश्यकता केंद्र सरकार के लिए अधिक से अधिक अनुकूल भावना की है।